आदिवासी कहानी साहित्य में जनतांत्रिक मूल्यों की तलाश

नन्हकू प्रसाद यादव,

शोध छात्र–हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषा विभाग,
डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास
विश्वविद्यालय,लखनऊ,उ.प्र.

शोध सारांश

जनजातीय साहित्य एवं समाज के प्रति घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है। उनके जीवन का यथार्थ चित्रण उनके साहित्य की विषयवस्तु है। आदिम समाज एवं साहित्य की नजदीकियों के विषय में कहा गया है कि आदिवासी समाज के मूल्यों, उसकी संरचना, उसके अस्तित्व पर मंडराते खतरे व विकास के नाम पर हो रहे विनाश से उपजी समस्याओं ही साहित्य की विषय वस्तु है।आदिम समाज की समृद्ध विरासत उनके साहित्य में विद्यमान है। मौखिक साहित्य को विभिन्न मिथकों के माध्यम से भी जाना जा सकता है। अब प्रश्न उठता है कि तत्कालीन सभ्य समाज के रचनाकारों ने इनको कितना महत्व दिया है? इसके लिए आदिम काल में प्रचलित मिथकों की सत्यता की तह तक जाना होगा, तभी आदिवासी पात्रों के साथ न्याय हो पायेगा। आदिम समूहों की समृद्ध वाचिक परम्परा के सोतों के विषय में विद्वान लिखते हैं– कि '' सदियों से अनाम– अनजाने, अकुशल और बच्चों जैसी सृजनात्मक विचार धारा से रची–बसी एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को सहज और परम्परागत दंग से स्थान्तरित होने वाली, इन कलाओं में लोक मानस की विविध गतिविधियां और मनोभावों की कल्पनायुक्त सरस अभिव्यक्ति होती है।आदिवासी कहानी साहित्य में प्रकृति का मानवीकृत रूप मिलता है। प्रकृति और आदिवासियों के बीच जो आत्मीय रिश्ता मिलता है, तथाकथित समाज उससे कोसों दूर है। आदिवासी लोककथाओं में यह आत्मीय रिश्ता देखा जा सकता है। प्रकृति से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध होता है कि वह प्रकृति को नुकसान नहीं पहुँचाता। वह उसकी हिफाजत मानवीय रूप में करता है। वह प्राकृतिक वनस्पतियों को नुकसान पहुँचाना पाप समझता है।

बीज शब्द– *आदिवासी कहानी, साहित्य , जनतांत्रिक मूल्य,वाचिक परम्परा*

हिन्दी के कहानीकारों का जनजातीय पहाड़ी अंचलों में रहने वाले आदिम समूहों से कम ही सम्पर्क हुआ है। यही वजह है कि साहित्यकारों का एक वर्ग आदिवासियों के यथार्थ अनुभवों को अभिव्यक्त नहीं कर पा रहा है। जिसकी वजह से साहित्यकारों का एक वर्ग उन्हें सजावटी आबादी के रूप में रोमान्सीकृत करने की मानसिकता रखता है। जबकि इस लेखन में स्वानुभूति व सहानुभूति का मुद्दा नहीं है और न ही जन्मना या कर्मणा मुद्दे का।

इस साहित्य की सभी विषयों की विषय वस्तु उनकी वाचिक परम्परा ही है। जिसमें कहानी का अलग ही महत्वपूर्ण स्थान हैं। दादा–दादी, नाना–नानी प्राचीनकाल से बच्चों को कहानी सुनाते आ रहे हैं। यह कहानियाँ उनकी वाचिक परम्परा में प्रचुरता से मौजूद है। इस सम्बन्ध में कवयित्री का कहना है कि– ''यह सही है कि आदिवासी साहित्य अक्षर से वंचित रहा, इसलिए वह उसकी कल्पना और यथार्थ को लिखित रूप में न तो साहित्य में ही दर्ज कर

पाया और न ही इतिहास में ही। हाँ लोकगीत, किवदंतियों, लोक–कथाओं तथा मिथकों के माध्यम से लोकगान में उसकी गहरी पैठ है। इसमें उसकी सम्पूर्ण परंपरा इतिहास और उसकी गौरवशाली शौर्य–गाथा वर्णित है, जिसे तलाशना जरूरी है।''[1]

जनजातीय कहानी लेखन में कोमल द्वारा सृजित कहानी 'साहूकार की मछली' में आदिवासी जनजाति की गरीबी व शोषण का मार्मिक दर्द है। यह कहानी एक गरीब आदिवासी बुधुवा व उसकी बीमार पत्नी की है, जो बीमारी के कारण बहुत ही कमजोर हो गयी। बुधुवा की पत्नी गरीबी के कारण कोई भी पौष्टिक वस्तुएँ खरीद नहीं सकती। अपनी इन्हीं मजबूरियों के कारण वह बुधुवा से मछली मार लाने को कहती है। पत्नी द्वारा मछली लाने की जिद पर गरीब बुधुवा कहता है कि ''लगता हय बिमारी ने तुम्हारी खोपड़ी उलट दी है। अरे भगवान इस दुनिया में गरीबों को कोई चीन्हता भी हुए। क्या तुम्हें साहूकार का डर नइ। वो मेरी चमड़ी उधेड़कर उसमें भुस भर देगा।''[2]

प्रकृति के विभिन्न संसाधनों को यदि किसी गरीब ने उपयोग किया तो जमीदार गरीब आदिवासियों का अमानवीय शोषण उत्पीड़न करते हैं। जबकि प्राकृतिक संसाधनों मे गरीबों की भागीदारी सबसे अधिक है। बुधुआ के गाँव में नदी का बंधा बाँधने में गरीबों का खून–पसीना एक हो गया था। लेकिन यदि बुधुआ कुछ मछलियाँ मारता है तो गंगा साहूकार कहता है कि'' ऐ, कौन हरामखोर मछली मार रहा है? ''ठहर साले, भागता कहाँ है, सुअर के बच्चे।'' ''रुक बे, साले मैं कहता हूँ रूक जा, वरना मैं तुझे गोली मार दूँगा। साले, चोट्टे, हरामजादे.....''[3]

कथाकार कोमल ने आदिवासी दर्शन को आधार बनाकर (पहचान) कहानी लिखी। इस कहानी में कथाकार ने संदेश दिया है कि शोषक वर्गों को गरीब आदिवासी को पहचान देनी पड़ती है। हमारे समाज की यह विडम्बना ही है कि हम मनुष्य को मानवता के तहत मनुष्य की पहचान नहीं दे सकते।

कहानी की विषय वस्तु इस प्रकार है कि एक मुखिया सिंह जी है। मुखिया के पास एक आदिवासी युवती जाति – प्रमाण पत्र बनवाने आती है, जिसके दौरान मुखिया युवती को नीचे से ऊपर तक देखते हैं और प्रश्नों का तरीका भी देखिए–''आदिवासी हो तो तुम्हारे हाथों में 'गोदना' कहाँ–2 ''उठकर मुखिया ने उसके हाथों पर अपना हाथ फिराया। और तुम्हारे कानों में 'बिड़ियों' (ताड़ के पत्ते का बना) जिसे आदिवासी स्त्रियाँ आभूषण के तौर पर अपने कानों में पहनती हैं) कहाँ? मुखिया जी मुस्कुराए और उसके कानों को बारी–बारी से हुआ।''[4]

मुखिया के प्रश्नों एवं उनके हाव–भाव को देखकर युवती अपने आप में सिमट गयी। उसका चेहरा भी शर्म से लाल हो गया। उसने अपनी आँखें नीचे कर ली। पहचान के लिए आदिवासी युवतियों का शारीरिक शोषण किया जाता है, प्रत्येक प्रश्न के बाद मुखिया उसके बदन पर हाथ रखता है। साहूकारों, जमीदारों को मानवता रूपी पहचान नहीं रही, जहाँ इंसानियत के तहत इस तरह के प्रश्न नहीं किये जाते, मनुष्य होने के नाते उसका आदर किया जाता है। कहानी में मुखिया के कुछ प्रश्न और देखिए–

''और तुम्हारा ये सलवार, कुरता और दुपट्टा'' मुखिया ने दुपट्टे को पकड़ कर हल्का सा झटका दिया। ''आदिवासी लड़कियों का पहनावा तो ऐसा नहीं होता। वे तो 'मोटिया' पहनती है। ''अंत में मुखिया कहते हैं कि ''खैर, यही तो पहचान है इन आदिवासियों की।''[5]

आदिवासियों की अस्मिता एवं निश्छल प्रेम से प्रभावित वाल्टर भेंगरा 'तरूण' ने 'खखरा' कहानी लिखी, यह कहानी आदिवासी अनुभवों के यथार्थ मूल्यों से सम्बन्धित है। कहानी का नायक जतरू आधुनिक शिक्षा व तकनीक का उच्च

अनुभव रखने पर भी अपनी आदिवासी अस्मिता यथा–जमीन व समाज को नहीं भूलता, साथ ही निश्छल प्रेमी की भावना से प्रभावित गाँव की आदिवासी युवती से विवाह भी करता है।

जतरा पढ़ाई पूरी करने के बाद अपने गाँव को ही अपनी कर्मभूमि बनाना चाहता है। वह अपने निजी प्रलोभनों को छोड़कर अपने गाँव व समाज की उन्नति के मार्ग पर ले जाना चाहता है। वह आदिवासियों की वास्तविक समस्याओं को अपनी शिक्षा के माध्यम से हल करना चाहता है। जतरू अपनी पढ़ाई पूरी कर जब गाँव जाने को कहता है तो उसके प्रोफेसर पूछते हैं कि ''जतरा तुम गाँव की उसी कीचड़ में वापस जाना क्यों चाहते हो? तुम्हारे समक्ष उज्जवल भविष्य है।'' जतरा का उत्तर प्रोफेसर को चुप कर देता है– जतरा कहता है कि ''सर, क्योंकि उस कीचड़ में शहर की कीचड़ की तरह बदबू नहीं, खुशबू होती है। महानगर की कीचड़ में भयंकर कीड़े पैदा होते हैं। मगर गाँव की कीचड़ में धान की खेती होती है। अनेक तरह की फसलें उपजती हैं। कमल के फूल खिलते हैं।''[6]

जतरा प्रोफेसर से कहता है कि हमें अपनी मातृभूमि से गहरा लगाव है, समाज के प्रति गौरव की भावना एवं कृषि के प्रति गम्भीर आस्था एक आदिवासी युवक में ही हो सकती है। आदिवासियों का अपनी जमीन,समाज के प्रति गर्व का भाव है, यही उनके आदर्श है, और यही उनकी सबसे बड़ी पूजा। गाँव जाने के निर्णय से उसके मित्र भी उसका मजाक करते हुए कोई नौकरी तलाशने की राय देते हैं, जिसका उत्तर देता हुआ वह कहता है कि '' अगर सभी सिर्फ नौकरी के मकसद से ही पढ़े तो खेती–बारी करने के लिए कौन रह जायेगा।''[7]

जतरा ने कठिन परिश्रम करके कृषि में डिग्री हासिल की, उसकी सफलता से प्रभावित होकर सरकार से उसे विदेश भेज दिया। उसे वहाँ भी बहुत प्रलोभन दिये गये। लेकिन इन प्रलोभनों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। उसने वापस आकर सरकारी अनुदान से गाँव की सभी समस्याओं को दूर किया। गाँव में जीविका के नये साधन बनाये एवं सबसे अहम बचपन की प्रेमिका से विवाह भी किया, क्योंकि जतरा एवं उसकी प्रेमिका दोनों ही आदिवासी बगिया के दो सुन्दर फूल थे।

आदिवासी कहानीकार रोज केरकेट्टा ने अपनी कहानी 'भँवर' में आदिवासी स्त्री को सुरक्षा देने एवं सम्पत्ति के कानूनी अधिकार देने की वकालत की है। प्रायः आदिवासी या गैर–आदिवासी समाज महिलाओं की सुरक्षा एवं सम्पत्ति के कानूनी हक के पक्ष में खड़ा नहीं होता। 'भंवर' कहानी भी एक आदिवासी विधवा मालकिन की है, जिनके दो मालिक चल बसे। इसके बाद मालकिन पर भारी विपत्ति आ गयी। नदी में बाढ आने से उनका आशियाना भी बह गया। इसके बाद मालकिन एक नौकर के साथ खेती का काम–काज देखने लगी। लेकिन मालकिन के सगे सम्बन्धियों को ही यह बात अच्छी नहीं लगी और वे मालकिन की जमीन को जोर जबरदस्ती से अपने कब्जे में करने को सोचने लगे। कुछ दिन बाद जमीन पर उन लोगों ने कब्जाकर लिया। उनके पक्ष में कोई भी आने को तैयार नहीं।

कहानीकार मालकिन एवं उनकी बेटियों के विषय में कहता है कि ''वे कितनी असहाय और अकेली हैं। अपना कहने को कोई नहीं, स्त्रियों की सम्पत्ति के अधिकार पारित होने पर भी अनुभव कर लिया कि कानून से सामाजिक व्यवस्था बंधी नहीं है। सामाजिक व्यवस्था उनके लिए है जिनके पास बाहुबल है। इसलिए कानून को सामाजिक व्यवस्था में उतारने की कोशिश को भारी कीमत चुकानी होगी।''[8]

बाहुबल प्रधान व्यवस्था ने माँ–बेटी का कत्ल कर दिया, छोटी–बेटी छिपकर किसी तरह निकल गयी। दोहरा हत्याकाण्ड होने पर भी

बाहुबली लोगों ने न्याय में कुछ नहीं होने दिया और पुलिस ने फाइल बन्द कर दी। कुछ दिनों बाद मंजरी अपने रिश्तेदार के साथ कोर्ट में हाजिर होती है जिससे गाँव वालों के सामने प्रश्नों का भंवर नाच रहा है। प्रस्तुत कहानी महिलाओं की सुरक्षा एवं सम्पत्ति में कानूनी हक की वकालत करती है। मानवीय सरोकारों और संवेदनाओं की भावना से प्रभावित 'चुरका मुर्गा' राधाकृष्ण की महत्वपूर्ण कहानी है। इस कहानी में आदिवसियों में पाये जाने वाले धार्मिक अंधविश्वासों का भी वर्णन किया गया है। कहानी एक अंधविश्वास से प्रारम्भ होती है। जिसमें एक आदिवासी की पत्नी बीमार होती है। उसे भोपा द्वारा बताया जाता है कि सफेद मुर्गा लेकर आओ , तब वह ठीक हो जायेगी। कहानी का नायक मुर्गा तलाशने से पहले अन्तर्द्वन्द में फँस जाता है कि मालिक के बिना पूछे मुर्गा कैसे पकड़ा जाय।

नायक पत्नी की गम्भीर बीमारी के लिए मालिक का मुर्गा पकड़ लेता है। मालिक उसे देख लेता है और उसके कुटुम्ब को ही चोर कहता है। नायक क्रोध से भरकर मालिक की हत्या कर देता है। इस अपराध के बदले उसे फाँसी होती है तब उससे पत्नी से मिलने के लिए कहा जाता है तब नायक कहता है कि उसकी पत्नी जेल में क्यों आयेगी, क्योंकि उसकी पत्नी भले ही निःसंतान है लेकिन मालिक के बच्चों का पालन पोषण कर रही है। जिसकी हत्या उसके पति ने की है।''[9]

प्रस्तुत कहानी में मानवीय सरोकारों को बड़ी ही गहरी वेदना से वर्णित किया गया है। यह सरोकार एक आदिवासी में ही हो सकते है कि जिसको फाँसी हो रही हो उसी की पत्नी मालिक के तीन बच्चों का पालन पोषण करें। यह मानवीय मूल्य आदिवासी समाज को सभ्य समाज से अलग करते हैं। कहानीकार ने धार्मिक अंधविश्वास को बढ़ावा नहीं दिया है, बल्कि उसके साथ मानवीय सरोकारों की वकालत की है। जिनकी आवश्यकता सभी समाजों के लिए एक औषधि के समान है।

जनजातीय लेखक पीटरपाल एक्का ने विस्थापन के दर्द को अभिव्यक्त करती 'राजकुमारों के देश' में कहानी लिखी। इस कहानी में आदिवासी मंगल काका एवं उनकी पुत्री चंदा की कहानी है। मंगल काका प्रकृति के बीच रहकर जंगली जड़ी–बूटियों को इकट्ठा करके अपने समाज का इलाज करते थे। काका कभी भी किसी से दवा एवं इलाज के पैसा नहीं लेते थे घर की जरूरी चीजें लोग उन्हें दे देते थे। कठिन परिश्रम करके जंगल के बीच एक –दो खेत बना लिये थे उनके लिए सारा जंगल धरती माता की तरह उदार, और वेफिफ्र था काका के इन खुशहाल दिनों के विषय में कहानी कार लिखता है कि– ''कितने खुशगवार पल मंगलू काका के यहाँ गुजारे जाने लगे थे। काकी ऐसे दुलारती कि उसी का बेटा हूँ। कभी चंदा तक रूढ़ने लगती। जंगल का कौन सा फल–फूल तब हमने नहीं चखा था– महुआ चार, तेदूँ कटहल आम– जाने काकी कहाँ–कहाँ से ढूँढ लाती थी। बरसात के दिनों में आलू की तरह जाने कौन से कंद खोद लाती, उबाल कर खाने पर कंद बहुत ही मीठे लगते।''[10]

कुछ दिनो बाद मंगलू काका के गाँव में नई कोलियरी खुल गयी थी। वहाँ बाहर के बहुत से लोग बस गये थे। मुआवजा की रकम गाँव के सरपंज की झोली में चली गयी थी। गाँव में राजनीति के बेहद घिनौने खेल होने लगे थें पढ़े लिखे लोग भोले–भाले आदिवासियों को बेरहमी से पीटते थे।वहीं, राजनेता, साहूकार, उदार आदिवासी मंगलू काका की बेटी के साथ बलात्कार करके उसकी हत्या कर देते हैं, और इसी घटना से चितिंत मंगलू काका आत्महत्या कर लेते हैं। अब वहाँ न वह प्रकृति – प्रागंण रहा और न ही ढोलक मादर, और न ही वह आदिवासी राजकुमार रहे जो खुशी के पलों में

उन्मुक्त मांदर बजाते थे। इस कहानी में विस्थापन के दर्द को गहरी संवेदना के साथ व्यक्त किया गया है। आदिवासी कथाकार दिनानाथ मनोहर की कहानी 'स्थित्यन्तर'' शोषण के विभिन्न आयामों को उभारती एक महत्वपूर्ण कहानी है। कहानी का नायक भुन्या भील शोषण की वर्तमान स्थित में स्वयं को शक्तिहीन महसूस कर रहा है। जबकि उसे अपने पुराने दिन जब उसने गिरधारी के बेटे का हाथ फट से काट लिया था, उसके गंडासे की धार अभी भी उतनी ही तेज है, फिर आज व्यवस्था बदल गयी है। उसके सामने शोषण करने वाला एक व्यक्ति नहीं जिसका हाथ काटकर शोषण रोक दे। प्रंजातंत्र के नाम पर शोषण करने वालों की एक संगठित जमात खड़ी है, जो जनता से भी बड़ी है।

शोषण के इस नये रूप पर नायक कहता है कि ''आदिवासी का अपना प्रजातांत्रिक तरीका है जो जन और जड़ से जुड़ा था, जो खत्म कर दिया गया है और बस बाकी रह गया है रिश्ता केवल शोषक और शोषित का।''[11]

ऐसी शोषण की स्थिति में आदिवासी मन भौचक्का है। वह यह तय नहीं कर पा रहा है कि अपनी जमात को किसके खिलाफ ललकारे। उसकी जमात को पुलिस की गाड़ी से कुचल दिया जाता है और सवेरे नायक की भी लाश मिलती है।

दिनानाथ मनोहर की दूसरी कहानी 'जंगल शांत हुआ' है। यह कहानी आदिवासियों के अपने बदलते समाज की गाथा है। आदिवासी न तो अतीत को भूल पा रहे हैं, और न ही वर्तमान के साथ चल पा रहे है। वे अपनी अतीत की यादों के साथ खत्म होते जा रहे हैं। यानी उनकी एक पीढ़ी खत्म हो रही है। कहानी का नायक अपनी ढोल बजाने की प्रशंसा में कहता है कि ''जब अतीत में वह ढोल बजाता था, तो पूरा का पूरा गाँव , जंगल में जुट जाता था और सबकी आँखों मे बस एक ही भाव होता था– प्रशंसा का भाव उसकी महारत पर गौरवान्वित होने का भाव।''[12]

आदिवासियों की यह कहानियाँ उनकी पीड़ा एवं दर्द के साथ उनकी अस्मिता से जुड़े रहने की कथाएँ है, जो समय को पकड़ने का आग्रह करती है।

प्रसिद्ध आदिवासी कवयित्री मेहरून्निशा परवेज़ अपनी कहानियों के बारे में कहती है–''अपनी संस्कृति से आज भी अमीर–धनवान यह आदिवासी मनुष्य के इहिास की लम्बी यात्रा में हमेशा छले गये। अपने आप में सिमटकर, सिकुड़कर ठिठुर कर रह गये। बाहर की दुनिया से दूर इन्होंने अपनी अंधी दुनिया बसा ली है, जिस तरह चीटियाँ अपने झुंड में कबीले में रहती हैं, ऐसे ही इन्होंने भी अपने को बाहर की दुनिया में हटाकर अलग कर दिया है।''[13]

उन्होने मानवीय सरोकारों की गहरी संवेदना पर 'कानीबाट' नामक महत्वपूर्ण कहानी लिखी। यह कहानी आदिवासी समाज के यथार्थ मानवीय मूल्यों को अभिव्यक्त करती है। कहानी का प्रारम्भ दुलेसा एवं उसकी माँ के संवाद से होता है। उसकी माँ दुलेसा से कहती है कि तेरा बाप बूढा हो गया, एवं उसका अपना लड़का भी नहीं है। इसलिए उसकी माँ ने राजू को घर–जमाई, रखा है। आदिवासी युवती दुलेसा इसके प्रतिकार करती है। दुलेसा की माँ उसे भरोसा दिलाती है, कि ''अभी तो साल भर रहेगा, उसे रंग–ढंग देखेगें, उसकी कमाई खायेंगे, तब लड़की सौपेगें।''[14]

दुलेसा अपने प्रेमी जिलेन से प्रेम करती है। वह राजू से शादी नहीं करना चाहती। हालांकि आदिवासी माँ–बाप भी अपनी लड़की की शादी लड़के को जानने समझने के बाद ही करते हैं। कहानी में अहम मोड़ तब आता है, जब दुलेसा का प्रेमी जिलेन उसे गर्भवती करके अपनी शादी दूसरी युवती से कर लेता है। उसकी माँ परदेशी जिलेन के विषय में कहती है। ''अरी फूस

की आग और परदेशी की प्रीति ज्यादा दिन नहीं रहती।''[15]

जुलेसा बहुत बैचैन हारे जुआरी की तरह धीमी गति से जा रही है। तभी घर जमाई रामू उसके पास आता है और उसके गर्भ में पल रहे बच्चे को अपना नाम देने का वचन देता है, ''वह कहता है तुझे लेने आया हूँ, दुलेसा।''तू उस दिन कहती थी न कि कानी बाट जंगल में गुम हो जाती है, देख मैंने खोज लिया, कानीबाट विशाल जंगल के सहारे ही चलती है, तेरे बच्चे को मैं अपना नाम दूंगा, दुलेसा''[16]

ऐसी मानवीय संवेदना एक आदिवासी युवक में ही हो सकती जो दूसरे के बच्चे को अपना नाम देकर नारी का सम्मान करता है। मेहरून्निसा परवेज ने आदिवासी स्त्रियों की गरीबी को ''शनाख्त'' कहानी में प्रस्तुत किया है। कहानी की नायिका बिती और उसकी माँ बहुत ही गरीबी में जीवन–यापन कर रही है। बिती का बाप शराब का आदी है, एवं उसके कई स्त्रियों से सम्बन्ध थे। बिती का जीवन दो जून की रोटी के लिए मजबूत था। उसका पिता कभी–कभी रात में घर आता और कुछ पैसे देकर चला जाता, बिती को बचपन के बाद वह पहचानता ही नहीं।

बिती अपने बचपन से ही अपनी गरीबी एवं घर के नंगे नाच को देख रही है। ''बचपन से ही दुःख अपमान सहने की उसकी आदत पड़ गयी थी, गरीबी के कई नंगे रूप देखे थे। अपनी आँखों के सामने वासना का नंगा नाच देखा था। जब शराब में धुत उसी के सामने उसका बाप उसकी माँ को नंगा करता, तो वह भय से आँखें बन्द कर लेती थी। पैसे के लिए खुद माँ को बिकते देखा था। इसी दुःख और अपमान की धूप में पलकर उसका शरीर जवान हुआ था।''[17]

कहानी अहम् मोड़ तब लेती है जब उसका पति नशे में अपनी बेटी से ही बलात्कार करता है, तब माँ का दिल टूट जाता है। इसके बाद उसके पिता की एक्सीडेन्ट में मौत हो जाती है। पहचान कराने पर माँ उसके पिता को पहचानने से मना कर देती है। माँ ने क्रोध वंश कोई मातम नहीं मनाया इसके बाद भी बिती गरीबी का नंगा रूप देखती रही। कहानीकार कहती है कि ''यही गरीबी थी शायद, जब भूखे पेट से होकर शराब आँखों में उतरती थी, तो पत्नी और बेटी में अन्तर नहीं दिखता।''[18]

मेहरून्निसा परवेज ने विवाह से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण कहानी 'अयोध्या से वापसी' लिखी। कहानी की नायिका नीरा विवाहित नारी है। राजेन्द्र उनके पति है लेकिन वह पत्नी को शक की नजर से देखते है। जबकि पुरुष एवं नारी का रिश्ता विश्वास की नीव पर खड़ा होता है। जहाँ विश्वास की नीव खराब हुई, वहाँ रिश्ता बिगड़ जाता है।

पति, पत्नी सम्बन्धों के बिगड़ने पर स्त्री को ही बलि का बकरा बनाया जाता है। रिश्ते बिगड़ने पर जब नीरा पिता के यहाँ आती है, तो उनके पिता भी पति के पक्ष में ही बात करते हैं। ''और तुम्हें भी चाहिए अब पति जो कहे मान लेना चाहिए। औरत पति के घर ही अच्छी लगती है। अपने स्वाभिमान को लेकर कब तक जिन्दा रहोगी, यह डंक जब तक रहेगा, तुम्हें डसता रहेगा, पत्नी का दर्जा पति से छोटा होता है। पति का बड़ा।''[19]

पिता के कहने पर नीरा जब पति के घर जाती है, तो उसे वहाँ अनेक तरह से अपमानित होना पड़ता है। पिता के घर रहने पर राजेन्द्र शक करता है। वह नीरा पर व्यंग्य वाण चलाये जा रहा है। वह कहता है कि ''इतने दिन तुम वहाँ रही किसी से दोस्ती तो हुई होगी। सुना है वहाँ काफी जोर–जोर से तुम्हारी शादी की बातें आ रही थी। इतने तुम्हारे आशिक होंगे यह तो हमें पता ही नहीं था।''[20]

कहानी की नायिका पति के शक एवं पिता के अपमान से व्यथित होकर उसका घर छोड़ते हुए कहती है कि ''किसी भी युग में झगड़े

के बाद पति के घर लौटने पर नारी को सम्मान नहीं मिला। सीता का भी अयोध्या लौटने पर अपमान हुआ था, पर इससे पहले कि तुम राम की तरह अन्धे होकर मुझे निकालो, मैं खुद तुम्हारी अयोध्या छोड़कर जा रही हूँ, कभी न लौटने के लिए।''[21]

कथाकार रणेन्द्र ने आदिवासी मानवीय मूल्यों को लेकर कई कहानियाँ लिखी। उनकी कहानियाँ आदिवासी दर्शन के यथार्थ अनुभव पर आधारित हैं। प्रांगण की जगह, बंजरता पाँव पसार रही है। रणेन्द्र अपनी कहानियों के विषय में लिखते है कि ''रणेन्द्र का यथार्थ बोध जीवन–जगत के प्रत्यक्ष अनुभवों से जन्मा और विकसित हुआ है। इस कारण यथार्थ की जटिलता, और उसकी संश्लिष्टता को परत –दर –परत उघाड़ते हुए वे जब यथार्थ के प्रकृत रूप का प्रत्यक्षीकरण करते हैं, तो कोई–कोई कहानी कहीं–कहीं औपन्यासिकता का भी आभास कराती है।''[22]

रणेन्द्र ने आदिवासी दर्शन पर रात बाकी, वह बस धूल थी, वारिश में भीगती गौरेया, जल रहें हैं हरसिंगार, रफीक भाई को समझाए, ठीक बा नू सायराबानू, एवं चम्पा गाछ, अजगर और तीलियाँ जैसी मानवीय मूल्यों पर आधारित कहानियां लिखी।

रणेन्द्र ने अपनी कहानियों में प्रेम के निश्छल रूप की अभिव्यक्ति अपनी कहानी 'ठीक बा नू सायराबानू' में की है। इसके साथ ही साथ साम्प्रदायिकता को भी कई कहानियों में आधार बनाया। उनकी कहानियाँ आदिवासी समाज के गहन अनुभव पर आधारित है। भाषा का प्रयोग भी आदिवासी अंचलों के अनुरूप किया है। मानवीय सरोकारों पर भी गहन चिन्तन करके आदिवासी समाज को मानवीय मूल्यों की दृष्टि से श्रेष्ठ बताया।

चर्चित आदिवासी कथाकार मधुराम बोरोने 'एक पैसा' शीर्षक कहनी में महिलाओं की पीड़ा को चित्रित किया है। से स्त्री अपनी पीड़ा को निम्न शब्दों में अभिव्यक्ति कर रही है।'' रेतीले मैदान में पेड़ कछुए के अण्डों से निकले बच्चे! मरते दम तक बस मुझे यही सालता रहे कि तुम्हारे लिए मैं इस जीवन में कुछ नहीं कर सकी।''[23]

राजस्थान की पृष्ठभूमि पर आधारित कहानी 'बक्खड़' एक महत्वपूर्ण कहानी है, जिसे चरण सिंह पथिक ने लिखी है। यह कहानी 'नाते गई स्त्री' के पुत्र की त्रासदी की गहरी पीड़ा की अभिव्यक्ति है। नाता प्रथा राजस्थान के आदिवासियों में पायी जाती है। इस प्रथा के द्वारा स्त्री की अप्रत्यक्ष रूप से खरीद–फरोख्त की जाती है। इस खरीद – फरोख्त में पीड़ा तो नारी को ही होती है। नाता–प्रथा में पति–पत्नी के किन्ही कारणों से अलग होने पर पत्नी अन्य पुरुष को दे दी जाती है, और बदले में पहले पति से कुछ धन लिया जाता है, जिसमें कभी कभी विवाद भी होता है।

कृण्ण चंन्द्र टडू ने संथाली भाषा में 'एक विता जमीन' कहानी लिखी। यह कहानी संताली आदिवासी समाज में लड़कियों को सम्पत्ति में अधिकार न देने की प्रथा के विरोध की गाथा है। कहानी की पात्र सरला कहती है कि ''क्या यह गाँव–देश उसका नहीं है– यह घर–द्वार उसका नहीं है? क्या स्त्री लड़की जात के लिए उसके अपने घर में जगह नहीं है? क्या जात को कोई कानूनी अधिकार नहीं होता? यदि ऐसा है तो लड़की–लडका एक साथ समाज में कैसे रह सकते हैं? फिर ऐसे में संताल समाज की गाड़ी कैसे बढ़ सकती है?''[24]

'प्यारे केरकेट्टा ने खड़िया भाषा में एक महत्वपूर्ण कहानी 'बेरथ बिहा' वर्षों पहले लिखी थी, इस कहानी का हिन्दी अनुवाद रोज केरकेट्टा ने किया है। कहानी का मुख्य सार यह है कि आदिवासी धर्म परिवर्तित करने के बाद भी अपने जीवन मूल्यों से अलग नहीं हो पाता, वह

जीवन मूल्यों को वह धर्म नहीं, जीने की शैली मानता है। आदिवासी के जीवन में आदिवासियत पहले है हिन्दू या ईसाई बाद में। इस कहानी में ही पहाड़ पर गाये जाने वाले पाडू की आवाज आदिवासी प्रयक्ता औरतों का मन विचलित हो गया। कहानी की नायिका जो गीत गाती है। उसकी पंक्तियाँ ''कब तक युवक तुम युवा होंगे। तुम्हारी दाढ़ी मूछें उगेगी। मैं तुम्हारी प्रतीक्षा करूंगी।''[25]

प्रसिद्ध आदिवासी कथाकार शंकर लाल मीणा ने अपनी कहानी 'कहानी के बाहर की औरत' में आदिवासी पुरुष की उस मानसिकता का पर्दाफाश किया है। जिसमें वह कहानी की औरत का सपना देखता है, और घर की स्त्री की उपेक्षा करता है। वह घर की स्त्री का मजाक उड़ाता है। नायिका कहती है कि ''मैं इस गृहस्थी का कोई बहुत आदर्श हिस्सा नही हूँ, पर इतना मानती हूँ कि एकदम अनावश्यक भी नहीं हूँ। इस गृहस्थी में कुछ योगदान मेरा भी है, वह कोई उपकार नहीं है किसी पर लेकिन एकदम फालतू भी नहीं हूँ। अपेक्षाओं का जहाँ तक सवाल है, वे बदलती रहती है। परिस्थितियों के साथ आप अगर आज अपने गाँव में खेती कर रहे होते, पिता जी की तरह, तब क्या ये अपेक्षाएँ होती?''[26]

जनजातीय जीवन मूल्यों से प्रभावित रामधन लाल मीणा ने अप्रत्याषित कहानी जो अन्याय के प्रतिकार' पर आधारित है। कहानी का नायक राजूलाल न्याय पाने के लिए अपना सब कुछ दाँव पर लगाकर भी न्याय व्यवस्था से हार जाता है। वह निराश होकर गाँव छोड़कर दूसरी जगह रहने लगता है उसका पुत्र प्रीतम सम्पूर्ण भ्रष्ट व्यवस्था को चुपचाप देखता रहता है। उससे रहा नहीं जाता, वह भी गाँव छोड़कर अन्याय का बदला लेने निकल पड़ता है। ''तीन गोलियाँ एक साथ चली। वे भी गाँव के तीन भागों में। सुबह पता चला कि पटवारी भगवानदास, संरपच हीरालाल और पंच लल्लू राम की किसी ने हत्या कर दी है। सोहन लाल गाँव से लापता था। यह अप्रत्याशित घटना देख सभी ढंग रह गये।''[27]

हिन्दी के कथाकार संजीव ने, आदिम जीवन को करीब से देखा और अपने अनुभव पर आधारित अनेक पहलुओं को कहानियों में अभिव्यक्ति किया। उनकी आदिवासी दर्शन पर सृजित कहानी 'टीस' है। प्रस्तुत कहानी में एक जनजातीय सपेरे को रखा गया हैं। सपेरे को उसके लोग शिबू काका के नाम से जानते है। सपेरे काखेत, खलिहान और उसकी समृद्ध संस्कृति का सुख कोयलरी मालिक के निजी स्वार्थ की भेट चढ़ जाता है। कहानी में इनका अन्याय शोषण एवं पूँजीपति व्यवस्था के प्रति उमड़ता आक्रोश शोषण व्यवस्था की पोल खोलता है। आहत शिबू काका मानव प्रकृति को जंगली प्राणियों के नाम से संबोधित करते हुए कहते हैं कि'''पिनाकी महतो एक नंबर का अजगर है– मुखिया का लड़का 'पत्तो देमना है, मुदिखाना का दुकानदार सेठ लोग राजस्थान का 'पीपला नाग है।''[28]

हाल ही मे कमलेश्वर द्वारा सृजित कहानी संग्रह 'मैं जीती हूँ का प्रकाशन हुआ। यह समग्र कहानियां उपेक्षित शोषित, पीड़ित आदिवासी लोगों की जीवन गाथा हैं। औद्योगीकरण एवं आर्थिक गतिविधियों से सबसे अधिक नुकसान आदिवासी समाज को हुआ। कहानी में जनजातियों की इन सभी रीति–रिवाज, परम्परा, पहाड़, नदियाँ, जंगल, बोली–बानी, संगीत, प्रेम, श्रम, समानता, ईश्वर का समाजीकृत स्वरूप, आदि कोई पक्ष नहीं है जो इन कहानियों में नहीं है। इन कहानियों में आदिवासी दर्शन की यथार्थ अभिव्यक्ति मिलती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. गुप्तारमणिकासं0,आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0–10

2. गुप्तारमणिकासं0, आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—145
3. गुप्तारमणिका,सं0 आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—147—148
4. गुप्तारमणिकासं0,आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी,वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—148
5. गुप्तारमणिकासं0,आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—149
6. गुप्तारमणिकासं0,आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, वाणी प्रकाशन ,नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—153
7. गुप्तारमणिकासं0,आदिवासी स्वर और नई शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—154
8. गुप्तारमणिकासं0,आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण —2017, पृ0—159
9. मीणा हरिराम, आदिवासी दुनिया, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, संस्करण —2012, पृ0—199
10. गुप्तारमणिका(सं0)आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन ,नयी दिल्ली, संस्करण —2017, पृ0—163
11. गुप्तारमणिकासं0, आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—13
12. गुप्तारमणिका(सं0) आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0—13
13. परवेजमेहरून्निसा,मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण—2008, भूमिका से
14. परवेजमेहरून्निसा,मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण —2008, पृ0—12
15. परवेजमेहरून्निसा, मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण —2008, पृ0—25
16. परवेजमेहरून्निसा,मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन ,नयी दिल्ली, संस्करण —2008, पृ0—26
17. मेरी बस्तर की कहानियाँ, मेहरून्निसा परवेज, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण—2008, पृ0—12
18. परवेजमेहरून्निसा,मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2008, पृ0—50
19. परवेजमेहरून्निसा, मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2008, पृ0—58
20. परवेजमेहरून्निसा, मेरी बस्तर की कहानियाँ, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2008, पृ0—65
21. परवेजमेहरून्निसा,मेरी बस्तर की कहानिया, वाणी प्रकाशन नयी दिल्ली, संस्करण—2008 पृ0—65
22. रात बाकी एवं अन्य कहानियाँ, रणेन्द्र, राजकमल प्रकाशन नयी दिल्ली, संस्करण—2010, पृ0— फ्रन्ट कवर पेज सें।
23. मीणाहरिराम, आदिवासी दुनिया, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास भारत, संस्करण —2012, पृ0—197—198

24. गुप्तारमणिका(सं0),आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण –2017, पृ0–220

25. गुप्तारमणिका(सं0),आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन ,नयी दिल्ली, संस्करण, 2017, पृ0–222

26. गुप्तारमणिका(सं0),आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन ,नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0–175

27. गुप्तारमणिका(सं0)आदिवासी स्वर और नयी शताब्दी, वाणी प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करणः 2017, पृ0–184

28. तीस साल का सफर नामा से, टीस, संजीव, पृ0– 76